PHILOSOPHY

Hons. Paper - VIII (Part III)

Dr. S. K. Singh
Mob - 9431449935

प्रामाण्यवाद (सांख्य एवं बौद्ध दर्शन)

⇒ सांख्य दर्शन :—

→ सत्कार्यवाद में विश्वास करने के कारण सांख्य दर्शन स्वतः प्रामाण्य एवं स्वतः अप्रामाण्य में विश्वास करते हैं। इनके अनुसार प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य दोनों कार्य हैं तथा दोनों अपनी उत्पत्ति के ~~पूर्व~~ पूर्व कारण में विद्यमान रहते हैं। अतः इनकी प्रामाणिकता एवं अप्रामाणिकता दोनों स्वतः ही हैं।

→ किन्तु, यदि प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य दोनों कारण में पहले से ही विद्यमान हैं तो फिर सत्य एवं असत्य ज्ञान के बीच के भेद का निर्धारण करना कठिन हो जायेगा।

⇒ बौद्ध दर्शन :—

→ मीमांसकों के ठीक विपरीत बौद्ध स्वतः अप्रामाण्यवाद एवं परतः प्रामाण्यवाद में विश्वास करते हैं। बौद्धों के अनुसार अप्रामाण्य ज्ञान की उत्पत्ति के समय से ही विद्यमान रहता है। ज्ञान में अप्रमाण्य रहने के कारण ही हम इस अप्रमाण्य का निषेध कर ~~प्रामाण्य~~ प्रमाण्य को स्थापित करते हैं। जब अप्रामाण्य का निषेध होता है तभी प्रामाण्य की उत्पत्ति होती है। इनके अनुसार ज्ञान को प्रामाणिक कहने का आशय ही है कि यहाँ

ही अप्रामाणिकता का निषेध किया जा चुका है। यही कारण है कि बौद्ध सम्यक् ज्ञान को परिभाषित करते हुये कहते हैं कि - 'अविसंवादकं ज्ञानं सम्यक् ज्ञानम्' अर्थात् वस्तुस्थिति के विरुद्ध न जानेवाले ज्ञान को ही सम्यक् ज्ञान कहा जाता है।

आलोचना —

→ यदि ज्ञान स्वतः प्रमाणित है तो फिर विभिन्न कार्यों में असफलता की व्याख्या तार्किक रूप से नहीं हो पाती।

→ यदि प्रत्यक्ष ज्ञान आरम्भ से ही अप्रमाणिक है तो फिर भ्रम और ~~संशय~~ संशय का वातावरण उत्पन्न होने लगता है।

निष्कर्ष :— प्रामाण्यवाद के संदर्भ में उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कोई भी सिद्धान्त ~~पूर्ण~~ सुनिश्चित नहीं है। यहाँ हम प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य के संदर्भ में यह कह सकते हैं कि- 'अभ्यासदशापन्न' अर्थात् परिचित अवस्था में ज्ञान की प्रामाणिकता स्वतः और 'अनभ्यासदशापन्न' अर्थात् अपरिचित अवस्था में ज्ञान की प्रामाणिकता परतः होती है। बौद्ध दार्शनिक शांतरक्षित का भी ऐसा ही मानना है।